UNIVERSAL
LIBRARY

OU_180453

UNIVERSAL
LIBRARY

OSMANIA UNIVERSITY LIBRARY

Call No. H 891.6/P 18 P Accession No. G. H. 1163

Author पाण्डेय, गंगाप्रसाद।

Title पत्रिका। 1937

This book should be returned on or before the date last marked below.

पर्णिका

श्री गंगाप्रसादपाण्डेय

प्रमोद पुस्तकमाला
कटरा, प्रयाग

प्रथम संस्करण दिसम्बर, १९३७

मूल्य { अजिल्द ॥=)
सजिल्द १)

मुद्रक-प्रकाशक
करुणाशंकर शुक्ल
प्रमोद-प्रेस, कटरा प्रयाग

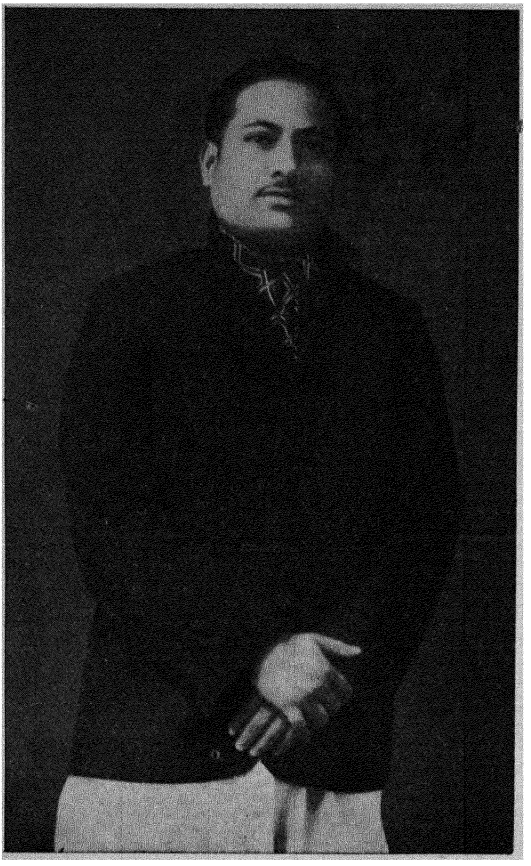

श्रीमान् कुँवर राघवेन्द्र सिंह,

(कोठी राज्य)

मेरी कविता के चिर प्रेमी

श्रीमान् कुँवर राघवेन्द्र सिंह जी,

(कोठी स्टेट)

के

कर कमलों में—

निवेदन

अपने नन्हे-से साहित्य-जीवन की क्षीण अनुभूतियों में रची हुई 'पर्णिका' भावुकों के सामने है। यह कैसी है, यह वही जानें। मुझे तो यह प्रिय हैं, क्योंकि मेरे जीवन की कितनी ही स्मृतियाँ इसे छाये हुए हैं। यद्यपि मुझे साहित्य-प्रासाद के सामने 'पर्णिका' उपस्थित करने में कुछ संकोच अवश्य हो रहा है, फिर भी, न जाने क्यों, अपनी भावनाओं के इस उपहार का लोभ छोड़ नहीं सका। शायद इस कारण कि मुझे अपनी साहित्य-शिशुता के नाते सबका प्यार पाने की ममता पर विश्वास है।

रचयिता

कञ्चनपुर
कोठी स्टेट
५—१२—१९३७

निर्देश

वीणा-वादिनि ! लेकर वीणा	९
मेरा छोटा सा उर-उपवन	११
आज क्या अभिसार मेरा	१३
बह रही अविरल दृगों से	१५
हँसते थे दोनों हिलमिल कर	१७
मधु बनो प्रेयसि!मधुप बन	१९
करुण मेरे जीवन का सार	२१
प्रिय मिलन की रात री सखि	२३
अपनेपन में भूली सी	२५
प्रिय, तुम्हारे प्यार पल की	२७
आज जग मुझको न भाता	२९
मेरी करुणा की वारि-विन्दु से	३१
प्रिय, प्रकृति-मधुरिमा का यह क्षण •	३४
वेदना के गान मेरे	६
बनी कोमल कुसुमों का हास	३९
जब शीतल शशि का सहज प्यार	४३

क्षण भर है जीवन का जीवन	४३
हो अंधकारमय जग-नभ में	४५
जहाँ हो नव-कलियों का साज	४७
इस मदिर मधुमास में रे	४९
मुझे दे दो फिर से हे देव	५१
सजनि, अलसाई आँखें खोल	५३
फेनिल फेनिल सागर लहरें	५५
पौ फटते बालारुण किरणें	५७
आज भी प्रिय क्यों न आये	६०
देख प्रिय, मधुमास आया	६२
चपलता चंचलता की खान	६५
मिले लोचन से लोचन लोल	६७
कौन तुम उर-उपवन में बैठ	६९
खोल कलिका निज उर का द्वार	७१
जब क्लान्त पथिक सा ज्योतिहीन	७३
गगन के जगमग राजकुमार	७५
हे शुद्ध बुद्ध चिर जागरूक	७७
रे पागल पिक प्रिय बोल बोल	७९

---

[१]

वीणा-वादिनि ! लेकर वीणा,
जग-प्रांगण में हँसती आओ;
जग-जीवन में स्वर्गिक-स्वर से,
नवजीवन सा भरती जाओ !

जन-मन-उपवन विकसित कर दो,
चिर-अन्धकार का कर विनाश;
मुखरित कर दो कवि कमलों को—
फिर भाग्य-भानु का दे प्रकाश !

नव गायन की स्नेहाञ्जलि को—
तेरे चरणों में अर्पण कर,
माँ ! हो पुलकित सब कवि गायें
तेरे मृदु स्वर में निज स्वर भर !

—+

[२

मेरा छोटा सा उर-उपवन !

जिसमें रहता मृधुमास सदा,
करते मृदु-भाव-विहग कूजन !

कामना कली ले विश्व-प्यार,
करती रहती सौरभ प्रसार,
जिसकी सुख-सुषमा का प्रतिपल,
भावुक जग करता अभिनन्दन ।

श्वासों का मलयानिल बहता,
धीरे से कानों में कहता—
तुम चिर-अनन्त के रूप ! सुनो,
करते प्राणों के अलि गुञ्जन !

जब मैं ही जग का आदि-अन्त,
मेरी स्वर्गिक निधियाँ अनन्त,
क्यों आज भूल मैं अपनापन,
विस्मित सा बैठूँ बन उन्मन ?

मेरा छोटा सा उर-उपवन।

—:+:—

[३]

आज क्या अभिसार मेरा ?

प्राणप्रिय के प्राण आये
तौलने लघु प्यार मेरा !

विगत सुख, सुषमा मनोहर,
भूल सब शृङ्गार सुन्दर,
आह, पीड़ा, वेदना से--
बस गया संसार मेरा !

प्रिय-प्रणय के वे मधुर दिन,
बरसते हैं नयन घन बन,
हो न विचलित अब हृदय से—,
अश्रु-मुक्ता - हार मेरा !

आज क्या अभिसार मेरा !

—:+:—

[४]

बह रही अविरल दृगों से,
आज यह जलधार कैसी ?

प्राण में नव पुलक भर कर,
साज सब शृङ्गार सुन्दर,
आज तो दिन प्रिय-मिलन का,
जीत में यह हार कैसी ?

सुप्त मन के भाव मृदुतर—
जग बने चंचल मनोहर,
मिलन-मधुदिन में व्यथा की,
तुहिन-सिक्त बयार कैसी ?
छोड़ जग का मोह, दुख, छल,
फिर बनाले हृदय निर्मल,
सुखद गायन के समय यह,
दीन करुण पुकार कैसी ?
प्राण ! अपनापन समर्पण--
कर तुम्हें देना इसी क्षण,
त्याग-सीमा के शिखर पर
भावना सविकार कैसी ?

बह रही अविरल दृगों से,
आज यह जलधार कैसी ?

—:+:—

[५]

हँसते थे दोनों हिलमिल कर,
उन चैत - चाँदनी रातों में,
था रहता कितना भरा प्यार,
आपस की मादक बातों में ?

चंचल सरिता की लहरों में
नीली नीलाम्बर - छाया में,
करते थे नौका पर विहार
मादकता की मधु माया में !

शशि सा वह सुन्दर रूप प्रिये !
बसता था मेरी पलकों में,
मन मेरा उलझा रहता था—
उन काली कुञ्चित अलकों में।

था एक नया संसार बसा
सुख से हम दोनों रहते थे;
प्राणों से भी बढ़कर मुझको
"तुम हो" दोनों यह कहते थे !

वह स्वप्न रचित प्रिय-प्रणय-पाश,
क्यों टूट गया क्यों चला गया ?
भुज-पाशों में लूँ बाँध कि इससे—
पहिले दुखिया छला गया !

—+—

[६]

मधु बनो प्रेयसि ! मधुप बन,
मैं तुम्हारे पास आऊँ !
साथ अपने नव उमंगें—
और नव उल्लास लाऊँ !

सिक्त मधु हो भूल जग-दुख,
चिर-अपेक्षित प्यार पाकर ;
सुखद स्वर से विश्व भर दूं
मिलन मञ्जुल गीत गाकर ;

कर विदा विह्वल विरह को—
अन्त हो अपलक प्रतीक्षा,
प्राण से मिल प्राण जायें
हो चुकी पूरी परीक्षा !
हृदय पुष्प - पराग - प्लावित
में मदिर अधिवास पाऊँ !

दिन फिरे फिर स्वप्न सच हों—
दासियाँ निधियाँ हमारी,
सौख्यमय संसार हो—
चर साधना साकार सारी ;
चाँदनी नीरव निशा--
मधु-प्रात हो दिन पूर्ण यौवन,
वर्ष, युग योंही बितायें
साथ दोनों प्यारमय बन !
प्रेम से सुर स्वर्ग का
संसार में आभास पाऊँ !
मधु बनो प्रेयसि ! मधुप बन
मै तुम्हारे पास आऊँ !

—+—

[७]

करुण मेरे जीवन का सार।
प्यारकी पीड़ा का यह भार।

विश्व के बन्धन से हो दूर,
छिपा स्पन्दन में स्मृतियाँ क्रूर,
आँख से बहते उर-उद्गार।

विकल आहों का उठ उच्छ्वास,
वेदना से भरता आकाश,
प्रणय का यह पागल उपहार।

सोच कर विगत सुखों की बात,
पिघलता सा रहता दिन रात,
हृदय करुणा से बन सुकुमार।

करुण मेरे जीवन का सार।

[८]

प्रिय मिलन की रात री सखि !

आज तो मधुमास पुलकित,
कह न नीरस बात री सखि !

मल्लिका, चम्पा, चमेली,
मदिर माधव की सहेली,
प्राणप्रिय के स्नेह स्वागत को
खिले जलजात री सखि !

विश्व - प्रेयसि नित नवेली,
रह न सकती है अकेली,
प्रणय-पल की किरण कोमल
हृदय मधु से स्नात री सखि !

सृष्टि का कण कण मिलेगा,
प्रेम से अग जग धुलेगा,
सफल क्षण की सुखद सुधि से
सहज सालस गात री सखि !
प्रिय-मिलन की रात री सखि !

—+—

[९]

अपनेपन में भूली सी,
यह करुण मालती फूली है;
पल्लव-पलकों में पली हुई
तरु-भुज-पाशों में झूली है।

है मधुर मधुर इसका जीवन
कितना कोमल कितना सुन्दर !
पावन पंखड़ियों का स्वरूप
शशि उज्ज्वलता से उज्ज्वलतर !

किस वन-कुमार के कर-स्पर्श से
हँसती है सकुचाती है ?
स्वच्छ सुरभि-उच्छ्वास छोड़ कर
अपना प्यार जताती है ।

उड़ रहे मधुप गुञ्जार भार—
ले, मधु में इसके भूल भूल,
मैं पाता अपने को इसमें
यह हँसे भले नित फूल फूल ।

—::+::—

[१०]

प्रिय, तुम्हारे प्यार पल की
मैं चिरंतन रागिनी हूँ!
मधुर जीवन की तुम्हारे
मैं सदा समभागिनी हूँ!

वद्ध-व्रीड़ा पाश में मन—
भाव बन्दी से पड़े हैं,
युगल लोचन स्नेह का
साकार रूप बने खड़े हैं;

आज हँस मिल बोल लें फिर
कल किसी का है न होता;
सुमन जो हँसता सवेरे
साँझ को है विकल रोता!

चन्द्र-मुख ज्योत्स्ना मनोहर—
की, अनन्य भिखारिणी हूँ!

बीतता क्षण क्षण युगों सा
है सुख-स्मृति भी बिरानी;
कौन करुणामय यहां है
जो सुने मेरी कहानी?

प्यारमय उर-सरस-सर में
प्रणय-पंकज खिल रहा है,
विश्व का कण कण सुरभियुत
दान सुषमा दे रहा है;

विरह जीवन साधना का
मैं बनी अनुगामिनी हूं!

[११]

आज जग मुझको न भाता !

हृदय-उपवन में मचल मन-भ्रमर दुख का गीत गाता !

प्राण तो प्रियप्राण के सँग
मैं यहाँ निष्प्राण सा हूं ;
लोग कहते हैं मुझे—
मैं जीव एक अजान सा हूँ ;

क्षणिक जीवन में हमारे कौन अपनापन दिखाता ?

हूक सी उठती हृदय में
प्रिय मिलन की भावना ले ;
खोज-हीन विशाल नभ में
क्षीण होती साधना ले ;
छेड़ने सुख की चिरस्मृति है निरंतर कौन आता ?
आज जग मुझको न भाता ।

—::+::—

[१२]

•

मेरी करुणा की वारि-बिन्दु से,
सरस सुमन सींचे जाते;
मेरी अनन्त आभा से ही,
निज ज्योति इन्दु सविता पाते!

मेरी ही मृदु मुसकानों से
पाती कलियाँ वन में विकाश
छा जाये तम लूँ मूंद आँख
देखूँ फिर हो उज्ज्वल प्रकाश !

मेरे ही मधुमय गायन से
छिड़ती मधुवन में मधुप-तान,
मेरी चंचलता पाकर ही
ये विहग-बाल भरते उड़ान !

मेरे मन के सुकुमार भाव
हैं शुभ्र-रूप शशि में निखरे ;
मेरी मादकता की फेनिल—
बूँदें हैं ये तारक बिखरे

मेरा सनेह साकार बना
बहता सरिता की धारों में ;
हैं मुझे उर्म्मियाँ चूम रहीं
मै बैठा छिपा कगारों में !

मेरे उर का उल्लास चपल—
ले मोर नाचते हैं फिरते!
मेरी करुणामय आहों से,
नभ में ये नव बादल घिरते!

लो! हास रुदन दोनों मेरे
मिलते होकर मुझसे बाहर;
देखो सजीवता जड़ता का
यह मिलन-समय सुविधा पाकर!

—::+::—

[१३]

प्रिय, प्रकृति-मधुरिमा का यह क्षण !

कलरव से कूजित वन उपवन,
बहता मादक मधुमास पवन,
उर-उर में भर-भर मृदु कम्पन !

प्रिय, प्रकृति-मधुरिमा का यह क्षण !

मंजरित आम्र की डाली पर,
जग-आँगन सुख-स्वर से भरकर,
गाती कोकिल करती नर्तन !

प्रिय, प्रकृति-मधुरिमा का यह क्षण !

मुकुलित कलिकाओं का नवदल,
करता वितरण सौरभ पल-पल,
जड़ में भी भर देता जीवन !

प्रिय, प्रकृति-मधुरिमा का यह क्षण !

अम्बर में श्यामल घन सुन्दर,
स्वर्गिक सुख फैला है भूपर,
सस्मित पुलकित जग का कण कण !

प्रिय, प्रकृति-मधुरिमा का यह क्षण !

—::+::—

[१४]

वेदना के गान मेरे।
साध जीवन में भरी है डूबते अरमान मेरे।

बन भ्रमर सौन्दर्य-उपवन—
में, जगत के नित्य भूला,
फूल की मुसकान पर हो—
मुग्ध मैं बन फूल फूला;

खूब मधु लूटा - लुटाया
प्रेम का खोला खजाना,
था उमंगों से भरा उर
भेद कुछ मैंने न जाना;

कल्पना मैंने न की थी
फिर कभी पतझार होगा,
यह सरस मधुमय समय सब
दूर होकर क्षार होगा;

आज स्मृति के सदृश हैं वे प्रणय के अभिमान मेरे!

दिन गये वे साथ उनके
जो उन्हें लाये यहाँ थे,
अन्यथा पीड़ित हृदय में
सौख्य के सामान क्या थे!

शून्य में अब• खोजता हूं
प्राणप्रिय! छाया तुम्हारी,
फिर कभीं क्या मिल सकेगी
देव, खोई निधि हमारी?

वेदना चिरसङ्गिनी का
साथ मेरा आ पड़ा है,
मैं रहा इस पार—
तू उस पार जाकर क्यों खड़ा है ?

आह, पीड़ा, दुख बने हैं आजकल मान मेरे !
वेदना के गान मेरे ।

—:+:—

[१५]

बनी कोमल कुसुमों का हास,
सुमुखि, तुम आईं थीं उस बार!
बनी पतझर का दुख-उच्छ्वास,
गईं मुझको दे पीड़ा-भार!

यही निर्ममता का व्यवहार
मचाता उर में हाहाकार।

आज फिर मधुवन में मधु मास,
श्वास में फिर सुख का उच्छ्वास ;
नवल कलियों सी लेकर लाज,
प्रिये, फिर आ जाओ सोल्लास !

यही जग-जीवन का व्यापार
विरह, फिर मिलन, विरह, फिर प्यार ।

—::—

[१६]

जब शीतल शशि का सहज प्यार,
छूता कण कण को कर पसार,
रसमय होता अग-जग अपार;

तब विह्वल हो कर अकस्मात्,
करने लगता मैं करुण गान।

जब मदिर किरण की कृपा-कोर,
निज मादकता में बोर-बोर,
करती कलिका को सुख-विभोर,
तब मैं उपवन से व्याकुल हो,
पूछा करता सुख का निदान।

जब नीरव निशि का पा दुलार,
उठ-उठ कर लहरें बार-बार,
"मिललो" कहतीं शशि से पुकार,
तब मैं सागर तट से कहता,
निज प्राणों की पीड़ा महान।

जब सुखमय होता जग-जीवन,
पा अपने प्रिय-पथ का साधन,
पुलकित हो गाता मृदु गायन,
तब मैं दुख का आलिंगन कर,
कोसा करता विधि का विधान।

—::+::—

[१७]

क्षण भर है जीवन का जीवन,
नश्वर जगती में तन, मन, धन!

वह शैशव सुधि की मधुर पोर,
है घूम रही बन-बन समीर,

पर बिछुड़ गया प्रिय भोलापन!

क्षण भर है जीवन का जीवन।

वे सुख के दिन, परिहास-हास,
कितना मादक मोहक विलास,
वह कहाँ गया सुन्दर योवन ?
क्षण भर है जीवन का जीवन !
अब जीर्ण-शीर्ण मन में विकार,
हैं घन-पुञ्जित ज्यों अन्धकार,
असहाय प्राण आकुल उन्मन !
क्षण भर है जीवन का जीवन !

—::+::—

[१८]

हो अन्धकारमय जग-नभ में
सुन्दर शशिहासिनि का विलास,
ये कुम्हलाती कुसुमावलियाँ
फिर पा जावें मधु-ऋतु-हुलास।

मधुपों का मधु-लोलुप समूह
मधु पी गाये अनुराग-राग,
फिर सूखी डालों में श्यामा
भरदे नव जीवन का सुहाग।

कण कण से सत्वर फूट पड़ें
सुख-शान्ति-सुधा की सरिताएँ,
हो उत्सुक गाये प्राणिमात्र
उस चिर-अनन्त की चरिताएँ।

हो विश्व-वेदना से विहीन
सुन्दरतम सुखका शुभ-निवास,
मानस-उपवन में हों विकसित
बहु प्रेम-पुष्प ले वास हास।

—::+::—

[१९]

जहाँ हो नव कलियों का साज
वसन्तानिल मन्थर गतिवान,
जहाँ रहता हो चिर संयोग
सुखद सुख ही का मधुमय गान,

वहीं मिलता प्रियतम का प्यार,
बसालो सोने का संसार।

जहाँ समता का हो साम्राज्य,
सरलता मानव का शृंगार,
निछावर भोलेपन पर देव!
स्वर्ग की सुन्दरियाँ सुकुमार,

वहीं पर भूलो पीड़ा-भार,
बसालो सोने का संसार।

जहाँ शीतल शशि-किरणें मौन
तुम्हारे स्वागत का सन्देश,
सुनाती हों तारावलि सङ्ग
बना अपना अति सुन्दर वेश,

वहीं है सुभग स्वर्ग का द्वार,
बसालो सोने का संसार।

जहाँ हो चिर अनन्त का ध्यान
मिटे जड़ जग-जीवन का साथ,
जगत के दुख से पीड़ित जीव
बनें सब सुखमय और सनाथ,

वहीं सब होकर एकाकार,
बसालो सोने का संसार

[२०]

इस मदिर मधुमास में रे
आज प्रिय का गीत गाले।

कलित कानन कुसुम सुरभित,
प्रकृति का प्रति रोम हरषित,
उस सुछवि को प्रेम से फिर
नयन-झूलों में झुलाले।

नवल कलिकाएँ मृदुलतर,
कह रहीं सन्देश हंसकर,
"इस सुनहले शुभ समय में—
प्राणप्रिय को तू मनाले"।

विहग-दल निज मधुर स्वर भर
कूजते हैं हरित तरु पर—
"मधुर दिन की मधुरिमा में
सदय प्रियतम को लुभाले"।

मलय मारुत मन्द मन्थर
डोलता मधु-मत्त बनकर
विश्व की उन्मत्तता में
प्राणधन की सुधि जगाले।

इस मदिर मधुमास में रे
आज प्रिय का गीत गाले।

—:+:—

[२१]

मुझे दे दो फिर से हे देव !
सरस वह शैशव-सुलभ दुलार,
वही माता की मीठी गोद
पिता का स्नेह सना वह प्यार।
सयानापन लो अपना छीन
जगत का दुखमय भारी भार,
बना दो मुझको शिशु अनजान,
गोद में सब की हो अधिकार।

बताशों पर बिक जांना शीघ्र
सिखादो मुझको फिर से आज,
बनूँ सब के हाथों का खेल
छोड़ कर अपनेपन की लाज।
भले भोलेपन पर हो मुग्ध
पुकारे फिर सारा संसार,
"तुम्हारी शिशुता पर सुरलोक
निछावर होता सौ सौ बार।"

—::+::—

[२२]

सजनि, अलसाई आखें खोल !
बालारुण स्वर्णिम किरणों से
हिल मिल मधुरस घोल।

सुरभित पवन पुलक उपवन में
मधुऋतु छाया है वन वन में,
प्रकृति-मधुरिमा के इस क्षण में,
मधुमय बोली बोल।

सरस सुमन हँस कर मन हरता
मधुकर मधु पी गुञ्जन करता,
प्राणों में प्रिय का स्वर भरता,

सुखद समय अनमोल।
सजनि, अलसाई आखें खोल!

—:o:—

[२३]

फेनिल फेनिल सागर लहरें
स्वागत करने को आती हैं,
धूमिल धूमिल छाया में वे—
कुछ कहती हैं सकुचाती हैं।

करती कलोल हैं वे सत्वर
चंचल अंचल लहराती हैं,
आलिंगन करने को मेरा
अपने कर-कमल बढ़ाती हैं।

लहरों से लहरें हिलमिल कर
नन्हीं बूँदें छहराती हैं,
प्रियतम के पथ में वे मानो
मुक्ता के माल बिछाती हैं।

उठ-उठ कर वे गिर गिर पड़तीं
भावना भली दिखलाती हैं,
संसार-चक्र के नर्तन का
सुन्दर सन्देश सुनाती हैं।

—::—

[२४]

पौ फटते बालारुण-किरणें
कुसमों से करतीं जब कलोल,
नव कलिकाएँ जब मुसकातीं
अपना घूंघट-पट खोल-खोल।

जब हो उन्मन गुञ्जन करता
मानी मधुकर मधु घोल-घोल,
विहगावलियाँ मन हर लेतीं
जब मधुर कंठ से बोल-बोल।

जब मलयानिल कहता फिरता
कानों में प्रियतम का सँदेश,
सौभाग्य लुटाता जग सारा
जब लख प्राची का नवल वेश।

जब प्रकृति-परी प्रिय-पूजन का
शृङ्गार-साज सब करती है,
जगती के कण कण में उस क्षण
जब नव-जीवन सा भरती है।

तब बैठ कहीं एकान्त प्रान्त
उस चिर अनन्त का मृदुल गान-
गाता अपने अस्फुट स्वर में
जग-दुख से बनकर मैं अजान।

उर अन्तर में अनुभव उसका
वाणी से करता आवाहन,
मैं हूं ससीम पर पा जाता हूँ
उस असीम का शुभ दर्शन।

—:—

[२५]

आज भी प्रिय क्यों न आए ?

घुमड़ पावस सघन घन गन
गगन में सखि, देख छाये।

चपल चपला चमक चंचल-
चित्त मेरा कर रही है,
प्राण में तन में हमारे
कसक-कम्पन भर रही है,
वेदना की बाढ़ छोटे—
हृदय में कितनी समाए!

है सजी सब अवनि ऊजड़
सौख्य का वरदान पाकर,
कुछ थकित सा पवन चलता
सुमन - सौरभ - भार लेकर,
बोल कोकिल डाल पर से
बिरह - विह्वलता बढ़ाए।

श्याम मेघों से लगाकर—
होड़ मेरे नयन प्रतिपल,
हैं बिछाते प्रणय-पथ पर
मोतियों की माल उज्ज्वल,

प्राण आकुल हैं सिसकते
कौन सावन गीत गाए?
आज भी प्रिय क्यों न आए?

—:+:—

[२६]

देख प्रिय, मधुमास आया,
छा रहा उल्लास वन में।

मिलन का सन्देश मृदुतर
चल पवन हमको सुनाता,
पुलक पल्लव लहलहाते
प्रीति का पल गीत गाता;
आज निज अंचल अवनि ने
हरित पट का है बनाया,
लाल केशर के मनोहर
तार से जिसको सजाया;

है मचलता स्निग्ध सुन्दर—
हास, कलिका में, सुमन में।

साध जीवन की सहज ही
कोकिला कर पूर्ण पाई
भृंग-दल के सङ्ग मिलकर
भाग्य को देती बधाई;

सुरभि भीनी से भरा जग
स्वर्ग सा अब बन गया है,
चेतना जड़ में छहरती
सुख सना क्षण क्षण नया है

व्याप्त है सुषमा सुनहली
सलिल में, स्थल में, गगन में।

प्रियतमाएँ स्नेह स्वागत में—
सजल पलकें बिछातीं,
कर रहीं अभिसार, नव-नव
वेश सुन्दरियाँ बनातीं,

विश्व-जीवन - सरस - सर में
प्राण पंकज सा खिला है,
प्रणय का संसार को—
साकार सा वर आ मिला है;

छिड़ रही नव रागिनी है
पर्णिका, गृह में, भवन में।

मैं बना पर चिर वियोगी
प्यार का अभिशाप लेकर,
मौन वाणी स्तब्ध लोचन
अश्रु जल का अर्घ्य देकर,

हूँ प्रतीक्षा में युगों से
कर रहा आव्हान तेरा,
हे उषे! उठकर क्षितिज से
आज रखले मान मेरा!

तिमिर चारों ओर फैला
हृदय में, मन में, नयन में।
देख प्रिय, मधुमास आया
छा रहा उल्लास वन में।

—::+::—

[२७]

•

चपलता चंचलता की खान
तितलियों में नर्तित तुम कौन?
विहंसते शिशु में बन अनजान
बताओ क्यों रहते हो मौन ?

उषा की लाली के संग देव !
बनाते सुन्दर स्वर्णिम प्रात,
बिखरते हो उपवन के बीच
तुम्हीं बनकर क्या सलिल प्रपात ?

तुम्हीं हो क्या यौवन-उन्माद,
सुकोमल कलियों की मुसकान ?
हृदय के मर्मस्पर्शी भाव
प्रणय के प्राणाधिक मेहमान ?

तुम्हीं हो क्या जग-जीवन-ज्योति
विश्व के कर्ता पालन-हार ?
तुम्हीं पर होता है क्या पूर्ण—
निछावर कवि-कल्पित संसार ?

—:+:—

[२८]

मिले लोचन से लोचन लोल,
उठे उर आपस में कुछ बोल,
गये हो व्यक्त अचानक हाय,
छिपे दो हृदयों के उद्‌गार,
गया हट मन पर से कुछ भार।

ज्वलित उर ले अधरों में प्यास,
छानता पृथ्वीतल आकाश,
मूक भाषा में आकुल प्राण
प्राण से करते प्रणय-पुकार,
साधना ही जीवन का सार।

युगल मानस में उठ अनुराग,
जगाता सुप्त निशा का भाग,
सदा अस्पष्ट रही जो साध
आज सहसा होती साकार,
प्रेम ही जीवन का आधार।

स्नेह-सरिता की विकल तरंग,
रही मिल प्रेमाम्बुधि के संग,
पुलक नभ गाता मंगल गान
अमर हो प्रथम मिलन का प्यार,
असीमित सीमित का अभिसार।

—::+::—

[२९]

कौन, तुम उर-उपवन में बैठ
मृदुल स्वर में गाते हो गान ?
हृदय कंपन के सँग तुम कौन
मिलाते अपनी मादक तान ?

सुखों के सूनेपन में देख
छेड़ते हो मुझको तुम कौन ?
हृदय में करते हो जब वास
बताओ क्यों रहते हो मौन ?

निकट आकर भी इतने देव !
दिखाते हो क्यों दुखद दुराव ?
रहेंगे अब भी क्या निःशेष—
विरह की विह्वलता के घाव !

प्रेम की मेरी पागल पीर
दूर होगी मेरा विश्वास,
मचलती है मतवाली चाह
भरा रग रग में नव उल्लास !

मधुरिमा के छविमय आगार
तुम्हारे रहते यह पतझार !
लजीली आँखों से चुपचाप
निकल आओ बन मधु की धार ।

साध मिट जाये रहे न चाह
दुरित हो द्रुत मेरा दुर्भाग,
बरस कर शीतल कर दो आज
धधकती मेरे उर की आग ।

—:+:—

[३०]

खोल कलिका निज उर का द्वार
जगत को देती सौरभ दान,
प्रकृति के कण कण में ले देख
छिपा है कितना त्याग महान !

हमारी पीड़ा का गुरु भार
न लेता कोई हाथ, उतार।

दिवस को देता दिनकर ज्योति
निशा का करता शशि शृंगार,
समय पर गा उठते खग-वृन्द
मधुप-दल कर उठता गुंजार

हमारा हो मन चिर-सुकुमार
न पाता कर क्षण एक विहार।
मिला है मानव को अभिशाप
क्षणिक जीवन का यह वरदान,
कहां है सुख-सुषमा का भोग!
व्यर्थ रे व्यर्थ मान, अभिमान!

हमारी आशा का संसार
निराशा से होता लाचार।
नियति के हाथों का बन खेल
छोड़ दे सुख-दुख-भेद-विचार,
रहो जैसे रहने को बाध्य
परिस्थितियों के बने शिकार;

मिलेगा कोई करुणागार
बनेंगे स्वप्न सभी साकार।

[३१]

जब क्लान्त पथिक सा ज्योतिहीन
रवि अस्ताचल में हो विलीन,
सन्ध्या के कलित कपोलों में
व्रीड़ा की रेखा हो नवीन।

जब बन्द विश्व का मधुर गीत
हो निन्द्रा-बन्धन में उदास,
हो तमाच्छन्न जग सुप्त शान्त
नभ जगे सजा तारक-प्रकाश।

तब स्वप्निल पंखों पर हे मन !
नभ - अन्तराल में लो उड़ान,
जा तोड़ क्षितिज का सिंहद्वार
देखो देवों का सुख-विधान।

सुर-सुन्दरियों का सलज हास
क्रीड़ा-कौतुक, वारिद - विहार,
भूलो जग का दुखमय जीवन
स्वर्गिक छवि, स्वर्गिक सुख निहार।

ज्योतिर्मय उनके मौन गान
लाओ अपने स्वर में उतार,
गाओ भय-संशय रहित, पूर्ण—
बन जाओ सुखमय निर्विकार।

तुम मेरे मन, चिर-सजग प्राण !
जग आँगन में बन कर विभात,
नव ऊषा के शुभ साथ-साथ
लाओ नव जीवन का प्रभात।

—::+::—

[३२]

गगन के जगमग राजकुमार !

मृदु घन तेरे रजत हिंडोले,
मदिर समीर झुलाती हौले,
तेरे मन मन्दिर में संचित,

चपला काचिर प्यार !
गगन के जगमग राजकुमार ।

नभ की पलकों की सुन्दर छवि,
शून्य लोक के हे अनुपम कवि,
सुर-सुन्दरियों की मुख-प्रतिभा,

निशि के सुख-शृंगार !
गगन के जगमग राजकुमार !

मानव-मन हो जब दुख-विह्वल,
मग-विहीन फिरता बन चंचल,
तेरी करुणा का प्रकाश तब,

बनता पथ-आधार ।
गगन के जगमग राजकुमार !

—::+::—

[३३]

हे शुद्ध बुद्ध ! चिर-जागरूक !
तुम हो करुणा के अमर प्राण,
हे मोह-मुक्त ! हे स्नेह-सिक्त !
तुम मानवता के परित्राण।

मायान्ध विश्व की पलकों में
आये थे भरने तुम प्रकाश,
दे गये उसे तुम आत्म-ज्योति
दे गये उसे तुम नव विकास।

हो अन्धकार में भ्रान्त विश्व
था उद्यत, करले आत्मघात,
दे गये तुम्हीं जीवन-प्रबोध
हे तिमिर-हरण स्वर्णिम प्रभात !

पड़ किरण सभी पर एक साथ
दे गई सत्य जग को अनूप,
प्रासाद, कुटी क्या राव, रंक
सब कर्मभूमि पर एक रूप।

मानव, विहंग, पशु, अखिल जीव
सब प्रेम-मार्ग में हैं समान,
करुणा से जीवित सकल सृष्टि
करुणा ही जीवन का विधान।

हे दिव्य चक्षु ! हे भव्य भिक्षु !
नत मस्तक तेरे प्रेम-द्वार,
है अग-जग करता यह पुकार—
"फिर आज विश्व में अन्धकार।"

—:o:—

[३४]

रे पागल पिक, प्रिय बोल-बोल !

जग-जीवन के कटु क्षण-क्षण में
अपने मन का मधु घोल-घोल।

चिर पुलकित प्रकृति-मधुरिमा के—
तुम दिव्य दूत क्यों आज क्लान्त,
मानव मन की विह्वलता से
क्या बने दुखी हो श्रान्त भ्रान्त?

किस व्याधि-व्यथा से तुम पीड़ित
बोलो रहस्य निज खोल-खोल।

क्या सदय सँदेशा कहता है
ऐ व्याकुल ! तेरा करुण मौन ?
सुख दुख की छाया धूप छाँह
से बचा बताओ जीव कौन ?

मेरे जीवन सा ही फिर है
तेरे जीवन का आज मोल।

रे पागल पिक, प्रिय बोल-बोल।

—::+::—